पूर्णरूप से जानता है कि श्रीकृष्ण उसके शाश्वत् स्वामी हैं, अतः किसी की सामर्थ्य नहीं कि उसे चलायमान कर सके। ये सब दिव्य गुण उसके लिए सब प्रकार से परमेश्वर श्रीकृष्ण का आश्रय लेने में सहायक हैं। भक्तियोग की यह सिद्धावस्था निस्सन्देह परम दुर्लभ है; परन्तु भक्तियोग के विधि-नियमों का पालन करने से भक्त इसको प्राप्त कर लेता है। इससे भी अधिक, श्रीभगवान् कह रहे हैं कि इस कोटि का भक्त उनका अतिशय प्रेमास्पद है, क्योंकि उसकी सब पूर्ण कृष्णभावनाभावित क्रियाओं से वे सदा प्रसन्न रहते हैं।

यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः।।१५।।

यस्मात्=जिससे; **न उद्विजते**=उद्वेग को प्राप्त नहीं होता; **लोकः**=कोई जीव; **लोकात्**=किसी जीव से; **न उद्विजते**=उद्वेग को प्राप्त नहीं होता; **च**=तथा; **यः**=जो; **हर्ष**=सुखः **अमर्ष**=दुःख; **भय**=भय; **उद्वेगैः**=उद्वेगादि से; **मुक्तः**=मुक्त है; **यः**=जो; **सः**=वह; **च**=भी; **मे**=मुझे; **प्रियः**=प्रिय है।

अनुवाद

जिससे किसी को उद्वेग (कष्ट) नहीं होता और जो स्वयं भी किसी जीव से उद्वेग को प्राप्त नहीं होता; जो हर्ष, शोक आदि उद्वेगों के प्रभावित नहीं होता, वह मेरा प्रिय है।।१५।।

तात्पर्य

इस श्लोक में भक्त के कतिपय गुणों का अधिक वर्णन है। भक्त से किसी जीव को कष्ट, उद्वेग, भय अथवा असंतोष नहीं होता। भक्त की कृपा जीवमात्र पर रहती है; वह ऐसा कोई कार्य नहीं करता, जिससे दूसरों को उद्वेग हो। दूसरी ओर, यदि दूसरे उसे उद्वेग देना चाहें, तो वह उद्विग्न नहीं होता। भगवत्कृपा के प्रताप से वह इतना अभ्यासयुक्त हो जाता है कि किसी भी बाह्य उपद्रव से क्षुब्ध नहीं होता। वास्तव में ऐसी कोई भी सांसारिक परिस्थिति भक्त को चलायमान नहीं कर सकती, क्योंकि वह निरन्तर कृष्णभावना में निमग्न और भक्तियोग के परायण है। सामान्यतः विषयी व्यक्ति अपने शरीर और इन्द्रियों की तृप्ति के अनुकूल पदार्थ की प्राप्ति होने पर हर्षित होता है और जब दूसरों के पास ऐसे भोग्य पदार्थ देखता है, जो उसे प्राप्त नहीं हैं, तो दुःख और ईर्ष्या भाव से भर जाता है। शत्रु के आक्रमण की आशंका उसे भयविह्वल कर देती है और किसी कार्य में अकृतार्थ रह जाने पर वह निराश हो उठता है। भक्त इन सभी विकारों से निरन्तर परे रहता है। अतएव वह श्रीकृष्ण का अतिशय प्रेमपात्र है।

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।१६।।

अनपेक्षः=स्पृहारहित; **शुचिः**=बाहर-भीतर से पवित्र; **दक्षः**=कुशल; **उदासीनः** अनासक्त; **गतव्यथः**=समस्त दुःखों से छूटा हुआ है; **सर्वारम्भ**=सब उद्यमों